धारण करना पड़ा। इसका कारण है—इस कोटि के मनुष्य परमसत्य को अन्तिम रूप में निर्विशेष ही मानते हैं। उनके अनुसार, परमेश्वर अपने निर्विशेष रूप से मायिक भगवत्-रूप धारण करता है। यह श्रीभगवान् के सम्बन्ध में प्राकृतधारणा है। एक अन्य मनोधर्ममयी धारणा भी है। ज्ञान के जिज्ञासु श्रीकृष्ण के तत्त्व का अनुमान लगाते हैं। उनके अनुसार परमसत्य का कृष्णरूप अर्जुन को दिखाये गये विश्वरूप से कम है। वे परमसत्य के साकार-सविशेष रूप को कल्पित मानते हैं। उनका विश्वास है कि अन्तिम रूप में परमसत्य पुरुष-विशेष न होकर निर्विशेष है। इसके विपरीत, अलौकिक पद्धति का प्रतिपादन गीता के द्वितीय अध्याय में है— प्रामाणिक आचार्यों से रसमयी श्रीकृष्णकथा सुनना। वास्तव में यही सच्चा वैदिकपथ है। अतएव जो यथार्थ वैदिक परम्परा में हैं, वे आचार्यों से कृष्णकथा सुनते हैं। इस प्रकार निरन्तर कृष्णकथा सुनने से श्रीकृष्ण में अनुराग हो जाता है। बहुधा वर्णन किया जा चुका है, कि श्रीकृष्ण अपनी योगमाया-शक्ति से छिपे हुए हैं। वे सब किसी के आगे दृष्टिगोचर अथवा प्रकट नहीं होते; उनका दर्शन उसी को होता है, जिसके प्रति वे स्वयं अपने को प्रकाशित करें। वेदों में इसकी पुष्टि है—केवल शरणागत जीव परम सत्य को तत्त्व से समझ सकता है। अतएव नित्य-निरन्तर कृष्णभावनामृत-सिन्धु में निमग्न योगी श्रीकृष्ण की भक्ति के प्रताप से प्राप्त दिव्य दृष्टि के द्वारा श्रीकृष्ण का साक्षात्कार करके कृतार्थ हो जाता है। इस प्रकार का साक्षात्कार देवताओं तक के लिये परम दुर्लभ है; वे भी श्रीकृष्ण को तत्त्वतः नहीं जान सकते। उच्च देवताओं को निरन्तर श्रीकृष्ण के द्विभुज रूप के दर्शन की उत्कण्ठा रहती है। इस सब का निष्कर्ष है कि चाहे श्रीकृष्ण के विश्वरूप का दर्शन बड़ा दुर्लभ है और जिस-किसी को नहीं हो सकता; परन्तु उनके श्यामसुन्दर स्वरूप का दर्शन और ज्ञान तो इससे भी कहीं दुर्लभ है।

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा।।५३।।

न =न; **अहम्** =मैं; **वेदैः** =वेदों के अध्ययन से; **न** =न; **तपसा** =कठोर तपस्या से; **न** =न; **दानेन** =दान से; **न** =न; **च** =तथा; **इज्यया** =पूजा से; **शक्यः** =सम्भव है; **एवंविधः** =इस प्रकार; **द्रष्टुम्** =देखा जाना; **दृष्टवान् असि** =तूने देखा है; **माम्** =मुझे; **यथा** =जिस रूप में।

अनुवाद

हे अर्जुन ! मेरे जिस रूप को तू अपने दिव्य नेत्रों से देख रहा है, उसे न वेदों से, न तप से, न दान से, और न केवल पूजा से ही जाना जा सकता है। इन साधनों के द्वारा मेरा तत्त्व से साक्षात्कार नहीं हो सकता।।५३।।

तात्पर्य

श्रीकृष्ण अपने माता-पिता वसुदेव-देवकी के सम्मुख सर्वप्रथम चतुर्भुजरूप से प्रकट हुए; फिर द्विभुज हो गये। अनीश्वरवादी अथवा अभक्त इस रहस्य को नहीं